P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-1) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

प्राचीन भारतीय चिंतकों का सामाजिक राजनीतिक चिंतन : वर्तमान में प्रासंगिकता

सुषमा पाण्डेय
सह आचार्य,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
टोंक, राजस्थान

सारांश

प्रस्तुत आलेख द्वारा प्राचीन भारतीय चिंतकों के सामाजिक राजनीतिक चिंतन एवं उनमें वर्णित राज्य, समाज व राजनीति के स्वरूप का विवेचन प्रस्तुत करते हुए वर्तमान परिदृश्य में उनके चिंतन की प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला गया है। भारतीय चिंतकों ने राजनीति को व्यक्ति की दैनिक क्रियाओं का एक हिस्सा मानते हुए कोई राजनीतिक चिंतन प्रस्तुत नहीं किया बल्कि हमारे चिंतक मस्तिष्क में इस तथ्य को लेकर चले कि राज्य व समाज की व्यवस्थायें व्यक्ति की सहमति द्वारा स्थापित और स्वीकृत होती हैं एवम् इनके माध्यम से व्यक्ति को सुरक्षित, सुव्यवस्थित तथा प्रगतिशील जीवन की प्राप्ति होती है। अतः उन्होंने राजशास्त्र पर पृथक से लेखन न करके व्यक्ति के जीवन में राज्य व समाज की भूमिका तथा उसके आदर्श रूप को कथाओं, प्रसंगों एवम् उद्धरणों द्वारा प्रस्तुत किया।

भारतीय चिंतकों की रूचि पाश्चात्य विद्वानों की भांति राजनीतिक सिद्धान्तों को प्रतिपादित करने की नहीं रही जो यह बताते हैं कि राज्य संस्थायें कैसी होनी चाहिये। वे 'चाहिये' पर चिंतन न करके व्यवहार में कार्य करने वाली राजव्यवस्थाओं तथा उनके आदर्श रूप का चित्रण प्रस्तुत करते हैं। भारतीय चिंतकों का मानना था कि राजनीतिक क्रियायें नीतिशास्त्र अथवा राजशास्त्र के व्यापक धर्म का अंश है जो व्यक्ति, समाज तथा राज्य सभी के कार्यकलापों का नियमन करती हैं। वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में जब समाज विसंगतियों, समस्याओं से ग्रस्त है, नैतिक अवमूल्यन, अपराधप्रवृत्ति, आतंकवाद, कानून व व्यवस्था की दुर्बल स्थिति तीव्रता से बढ़ रही है, ऐसे में हमारे प्राचीन चिंतन के अनुभवजन्य सिद्धान्तों एवं व्यवस्थाओं का विश्लेषण व मूल्यांकन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में व्यावहारिकता के धरातल पर करते हुए समाज व राजव्यवस्थाओं का सफल संचालन किया जा सकता है। भारतीय चिंतन हमारी सांस्कृतिक धरोहर है। आवश्यकता है प्राचीन चिंतन पर दृष्टि रखते हुए इस धरोहर को सहेज कर रखा जाये क्योंकि ये मानव मनोविज्ञान एवं सुसंगठित समाज व राज्य व्यवस्था के आधार हैं।

मुख्य शब्द : मनुस्मृति, कौटिल्य, आदर्श राज्य, राज्य सत्ता, रामायण, महाभारत, पाश्चात्य चिन्तक।

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय इतिहास में सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक विचारधाराओं का अपना विशेष स्थान है। प्राचीन राज्य व्यवस्थाओं का ऐतिहासिक आदर्श आज भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है यदि उनका अध्ययन, मनन एवं विश्लेषण करके उन्हें व्यवहार में उतारा जाये। किन्तु वर्तमान में भारतीय सामाजिक–राजनीतिक चिंतन की विडम्बना यह है कि उसमें पाश्चात्य चिंतकों के आधार पर ही भारत की राजनीतिक, सामाजिक व्यवस्था एवं अर्थव्यवस्था का विश्लेषण किया जा रहा है। इसके पीछे संभवतः पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रतिपादित यह भ्रान्त धारणा प्रभावी रही है कि प्राचीनकाल में भारतीय विचारकों की दृष्टि धर्मशास्त्र तथा आध्यात्म शास्त्र पर ही केन्द्रित थी एवं भारतीय दर्शन में राजनीतिक चिंतन का अभाव था। पाश्चात्य विचारक प्राचीन भारतीय साहित्य में से राज्यशास्त्र पर पृथक ग्रंथ ढूँढने लगे जबकि यहां स्थिति इससे सर्वथा भिन्न थी। भारतीय विचारकों ने 'राजनीति' को मनुष्य के दैनिक जीवन के एक अंग के रूप में देखते हुए इसे अलग से उस प्रकार महत्व प्रदान नहीं किया जैसा यूरोपीय अथवा पश्चिमी विचारकों ने दिया। साथ ही

तत्कालीन भारतीय विद्वानों ने अपना चिंतन किसी सिद्धान्त विशेष के प्रतिपादन हेतु भी प्रस्तुत नहीं किया बल्कि उन्होंने राजनीतिक क्रियाओं को नीतिशास्त्र अथवा राजशास्त्र के व्यापक धर्म का अंश माना जो व्यक्ति, समाज, राज्य सभी के कार्यकलापों का नियमन करता है। हमारे प्राचीन चिंतकों ने 'चाहिये' पर विचार न करके व्यवहार में जो व्यवस्थायें काम करती है उनके आदर्श रूप का चित्रण किया है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रसारित उस भ्रामक धारणा के यथार्थ को उजागर करना है जिसमें उन्होंने राजनीतिक चिंतन का प्रारंभ पश्चिमी देशों से माना एवम् भारतीय चिंतन को राजनीतिक दृष्टि से शून्य मानते हुए उसे मात्र धर्म व आध्यात्म तक सीमित रखा।

ऐतिहासिक स्थिति

औद्योगिक क्रांति के पश्चात विज्ञान की प्रगति कर लेने से उन्मादित नवोदित यूरोपीय राज्यों ने अपनी श्रेष्ठता को मानव शास्त्र के सभी क्षेत्रों में मान्य बनाने का प्रयास किया। अपनी श्रेष्ठता के वशीभूत होने के कारण वे यह नहीं देख सके कि भारतीय साहित्यों, रामायण में राम के चरित्र और हर्ष चरित्र में वर्णित हर्ष के चरित्र द्वारा एक राजा के उन गुणों का जीवन्त एवं व्यावहारिक रूप प्रस्तुत किया गया है जो वास्तव में संभव और व्यावहारिक है। इनमें राजा का चरित्र प्लेटो द्वारा वर्णित राजा जैसा काल्पनिक नहीं है।

पाश्चात्य सिद्धान्तकारों ने मनुष्य की क्रियात्मक गतिविधियों को सिद्धान्त के अनुरूप प्रस्तुत करना चाहा और मनुष्य को सिद्धान्त से संचालित मशीन मान लिया जबकि सत्य है कि मानवीय मनोविज्ञान और मानवीय कमजोरियों को समझने की दूरदृष्टि सिद्धान्त में नहीं हो सकती। सिद्धान्त को व्यवहार में लागू करने पर यदि विसंगतियाँ आती हैं तो प्रतिक्रिया स्वरूप नया सिद्धान्त प्रस्तुत कर दिया जाता है जबकि मानवीय आचरण के संबंध में ऐसा संभव नहीं। अतः भारतीय चिंतकों ने मनुष्य के नैसर्गिक व्यवहार को प्रधानता दी। उन्होंने यह नहीं बताया कि राजा या शासक कैसा होना चाहिए? बल्कि प्रत्यक्ष उपस्थित प्राकृतिक रूप से जो मानवीय आचरण दिखाई दिया, उसमें कैसी व्यवस्थायें संभव हो सकती हैं, इस बात को कथा, कहानी एवं विविध उद्धरणों के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए राज्य व समाज की आदर्श व्यवस्थाओं का निरूपण किया। धार्मिक चिंतन में उन्होंने सामाजिक व्यक्ति को वह आचरण करने के नियम प्रस्तुत किये जो समस्त के हित में समाज के हर सदस्य को धारण करने चाहिए। इससे स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय चिंतन यह ध्वनित करता है कि राज्य, व्यक्ति और समाज तीनों का समन्वित विकास और उत्कर्ष कैसे किया जा सकता है।

प्राचीन भारतीय साहित्य एवं उनमें वर्णित सामाजिक राजनीतिक व्यवस्थाओं का स्वरूप

प्राचीन राज्य व्यवस्था उतनी ही पुरातन है जितनी यहां की सभ्यता, संस्कृति एवं धर्म। प्राचीन भारतीय साहित्य में राज्य व्यवस्था को राजधर्म, राजनीति, राज्यशास्त्र, दण्डनीति, नीति शास्त्र, दण्डनीति, नीति शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि कई शब्दों से संबोधित किया गया है। प्राचीन भारत में प्रचलित शासन पद्धत्तियों का स्रोत वेद, ब्राह्मण, धर्म सूत्र, धर्मशास्त्र उपनिषद, पुराण, महाकाव्य (रामायण व महाभारत), जैन ग्रंथ तथा बौद्ध जातक आदि प्राचीन साहित्य हैं। इनके अतिरिक्त मनुस्मृति, कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र, कामन्दकीय नीति शास्त्र, शुक्र नीति, वृहस्पति संहिता, संस्कृत साहित्य में लिये ग्रंथ जैसे पाणिनी का 'व्याकरण' (अष्टाध्यायी), कालिदास के रघुवंश, विशाखादत्त के 'मुद्राराक्षस' आदि ग्रंथों में भी प्राचीन भारतीय शासन पद्धत्ति एवं समाज के संदर्भ में वृहद विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इनके अतिरिक्त इस देश के शिलालेखों, सिक्कों में रक्षित लेखों से भी इस विषय में बहुत सी बातें ज्ञात होती है।

प्राचीन भारतीय सभ्यता के विकास में मनुस्मृति तथा याज्ञवलक्य कृत 'याज्ञयवलक्य समष्ति' का बड़ा महत्व है क्योंकि इन ग्रंथों से तत्कालीन मानव समाज के जीवन के संपूर्ण क्षेत्रों यथा राज्य, समाज, राजा, शासन, न्याय व्यवस्था, कर व्यवस्था, परराष्ट्र संबंध आदि का परिचय प्राप्त होता है। पौराणिक दृष्टि से मानव जाति के जनक के रूप में पहचान रखने वाले मनु का प्राचीन भारतीय राजाओं में प्रथम के रूप में भी वर्णन किया गया है। यद्यपि आधुनिक आलोचकों द्वारा मनु के विचार, ब्राह्मणवाद के एकछत्र राज्य को मानवाधिकार के आधार पर अमान्य करार दिया गया है, क्योंकि विकसित एवं सुसंस्कृत वर्तमान युग में जाति आधारित वर्गीकरण अतार्किक व अवैज्ञानिक होने के कारण अस्वीकृत है। संभवतः तत्कालीन परिवेश एवम् परिस्थिति की यह मांग रही हो। इसके अतिरिक्त अस्पृश्यता जैसी मानवीय बुराई, नारी स्वातन्त्रय तथा शुद्ध धर्म पर मनु के विचार आज कोई अर्थ नहीं रखते हों किन्तु निश्चित ही मनुस्मृति में वर्णित राजदंड, शिक्षा, पर राष्ट्र संबंध आदि विषयों का विचार आज भी प्रासंगिक है। सामाजिक स्थिति का अवलोकन करें तो जातिगत उत्थान तथा जन्म के स्थान पर कर्म पर आधारित मानव स्थिति का मजबूत होना, इस बात से प्रमाणित हो रहा है कि आज अंर्तजातीय विवाह उदार हृदय से परिवार और समाज में स्वीकृत व मान्य हो रहे हैं। इस बात का कोई अर्थ नहीं है कि कोई सर्वोच्च प्रशासनिक अधिकारी किस जाति का है। उसकी शक्तियाँ जाति द्वारा तय न होकर पद द्वारा होती हैं।

वाल्मिकी रामायण में भारत के आदर्श राजनीतिक जीवन, सामाजिक, धार्मिक व आध्यात्मिक जीवन का वास्तविक चित्रण है। इसमें राजा, अधिकारी, सामन्त, प्रजा यहाँ तक की ऋषि मुनि भी राजनीति से प्रभावित हैं। धर्म राज्यों का संचालक है किन्तु धर्म किसी विशेष जाति, वर्ग या साम्प्रदायिक तत्व से प्रभावित न होकर सदाचार, आत्मकल्याण तथा लोककल्याण आदि भावनाओं के स्तम्भों पर टिका हुआ है। रामायण में वर्णित यही धर्म राज्य का आधार स्तम्भ होने के कारण वर्तमान युग के मार्गदर्शक के रूप में अवस्थित है। जाति बंधन से परे परिष्कृत एवं उच्च मानवीय मूल्यों की झलक रामायण में तब दिखाई देती है जब क्षत्रियवर्णी राम निम्न जाति की शबरी के जूठे बेर निश्चल, सहज एवं आत्मीय भाव से खाते हैं।

विश्व के सबसे बड़े महाकाव्य की संज्ञा से विभूषित महाभारत विविधता से पूर्ण महाकाव्य है जो पंचम वेद भी कहलाता है। इसके विभिन्न पर्वों में राजनीतिक विषय सामग्री उपलब्ध है। महाभारतकालीन राजाओं को दिये गये आदेशों से स्पष्ट होता है कि उस समय राजनीति शास्त्र के अध्ययन अध्यापन की परम्परा अत्यन्त सुव्यवस्थित थी। इनमें भीष्म द्वारा युद्धिष्ठिर को दिये गये उपदेश, वासुदेव कृष्ण, नारद, मार्कण्डेय, वकदालम्य देवस्थान, धौम्य आदि में भी विभिन्न अवसरों पर राजनीतिक उपदेश दिये गये। नारद ने युद्धिष्ठिर और कृष्ण दोनों को राजनीतिक शिक्षा दी। विदुर नीति राजनीति की दृष्टि से अत्यन्त महत्व रखती है। विदुर ने राजनीति को नैतिक मूल्यों पर आधारित किया। भीष्म गीता में भीष्म की दृष्टि भी 'मूल्यात्मक' रही। विदुर एवं भीष्म पितामह का राजनीतिक चिंतन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पूर्णतः प्रासंगिक है क्यों राजनीति के वर्तमान परिदृष्ट में नैतिक अवमूल्यन तीव्रता से हुआ है। आम जनता के कष्टों का निवारण तथा भ्रष्टाचार से मुक्ति समाज व राजनीति में नैतिकता के समावेश द्वारा ही की जा सकती है। निष्कर्षतः महाभारत का यह संदेश कि राजनीति विशुद्ध रूप से ज्ञान की चिंतनात्मक एवं सैद्धान्तिक शाखा ही नहीं है बल्कि यह संस्थागत नियमन तथा सरकारी कार्यों के कुशल प्रशासन का व्यावहारिक ज्ञान है, आज भी प्रासंगिक है।

बौद्ध ग्रंथों में बुद्ध के चरित्र के संकलन के साथ उस काल की शासन व्यवस्थाओं पर भी प्रकाश डाला गया है तथा इन शासन व्यवस्थाओं में राजा के अधिकारों को सांविधानिक प्रतिबंधों से सीमित करते हुए राजा के पुरोहित तथा अमात्यों को शासन में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। साथ ही गणराज्य का शासन संचालन करने हेतु द्विसदनीय सभा व समिति का भी उल्लेख किया गया जिनमें राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक विषयों पर वाद–विवाद होता था। जातक में लिच्छवि शासकगणों का शासन था। उन्हें प्रजातंत्रीय शासक कहा गया है। यहाँ गौरतलब है कि संसदीय प्रजातंत्र के जनक के रूप में जानी जाने वाली ब्रिटिश शासन व्यवस्था पूर्णतः इस व्यवस्था की भांति है जो बौद्ध साहित्य लिखे जाने के बहुत समय पश्चात अस्तित्व में आई। साथ ही बुद्ध के अहिंसावादी दर्शन का प्रभाव भी तत्कालीन एवम् परवर्ती राजनीति पर स्पष्ट दिखाई देता है। कलिंग विजय पश्चात् बुद्धवादी दर्शन के प्रभाव से ही सम्राट अशोक का हृदय परिवर्तन हुआ। जैन पुराणों में केन्द्राभिमुखी राजसत्ता के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है जिसमें स्पष्ट किया गया है कि जिस व्यक्ति ने राज्य का निर्माण किया वही शासक भी है। राज्य की समस्त सत्ता उसमें केन्द्रित थी। किन्तु राजा के राज्य संबंधी अधिकारों में राजतंत्रीय निंरकुशता के सिद्धांत को पूर्णतः अस्वीकृत किया गया। जैन मनीषियों ने बौद्धदार्शनिकों की भांति गणराज्य प्रणाली में विश्वास करते हुए राजा के रूप में एक ऐसे व्यक्ति का चित्रण प्रस्तुत किया जिसकी क्षमता लौकिक नहीं वरन नैतिक आदर्शों से अनुप्राणित हो। उनका मानना था कि नैतिक अनुशासन को दृढ़ करके प्रजा की रक्षा करना राजा का नैतिक कर्त्तव्य है। जैन विचारकों का ध्येय भीषण रण हिंसा को समाप्त कर विश्व शासन की स्थापना का था। उनकी मान्यता थी कि न राज्यों का पृथक अस्तित्व होगा न राज्य विस्तार के लिये युद्ध होगा। आज भी राजनीतिक अस्थिरता, सामाजिक विक्षोभ तथा शस्त्र प्रतिस्पर्धा के समाधान हेतु विश्व राज्य एवं विश्व सरकार की कल्पना को भूमण्डलीकरण के विचार के अन्तर्गत साकार करने का प्रयास अंतर्राष्ट्रीय संगठनों का है। इस प्रकार बौद्ध व जैन दर्शन दोनों ने ही लोककल्याण, अहिंसा, शांति एवं शासक के नैतिक आचरण को शासन व्यवस्था का मूल आधार माना है जो निःसंदेह आज भी प्रासांगिक है।

प्राचीन भारतीय चिंतन में कौटिल्य का विशिष्ट स्थान है। कौटिल्य रचित 'अर्थशास्त्र' प्राचीन भारतीय राजनीति का सबसे स्पष्ट, वैज्ञानिक एवं विस्तृत ग्रंथ है जिससे तत्कालीन राजनीतिक विचारों एवं संस्थाओं का व्यापक परिचय प्राप्त होता है। अर्थशास्त्र में वर्णित आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, प्रशासनिक, न्यायिक तथा शासन विज्ञान संबंधी विचारों ने न केवल भारत वरन अन्य देशों में भी हलचल मचा दी थी। इस ग्रंथ के प्रकाश में आने के पश्चात पाश्चात्य विद्वानों की यह भ्रांति दूर हो गई कि भारत में ज्ञान हिन्दू धर्म, ईश्वर ज्ञान तथा दर्शन तक सीमित था उनका राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्र में योगदान नगण्य था। कौटिल्य ने अपने ग्रंथ में चार विद्यायें बताई है उनमें से दण्ड नीति भी ज्ञान है। दण्ड नीति या राजशास्त्र भारत के उन पुराने शास्त्रों में से है जो वैदिक काल से आज तक देशवासियों का दिशा निर्देशन करते रहे हैं। कौटिल्य के अनुसार 'दण्ड' का वास्तविक अर्थ है मनुष्यों की स्वेच्छाचारिता व उच्छृंखलता को मर्यादित करना। दण्ड शब्द सजा के अर्थ में प्रयुक्त न कर, दम के संदर्भ में प्रयुक्त है जो मर्यादा का भाव भी अपने सन्निहित किये हुए है।

यह सत्य है कि कौटिल्य ने तत्कालीन राजतंत्र के आधार पर राज्य व्यवस्थाओं का निरूपण किया है जबकि आधुनिक राज्य व्यवस्था लोकतांत्रिक स्वरूप पर आधारित है। किन्तु कौटिल्य द्वारा वर्णित पुरातन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, प्रशासनिक, न्यायिक, सैनिक आदि व्यवस्थाओं एवं वर्तमान व्यवस्थाओं में काफी कुछ समानता है। अर्थशास्त्र में लोककल्याणकारी राज्य तथा प्रजा के योगक्षेम पर विशेष बल दिया गया है तथा इस हेतु आर्थिक सत्ता का सुदृढ़ होना अत्यन्त आवश्यक बताया गया जो आज के आर्थिक युग में पूर्णतः प्रासंगिक है। सुरक्षा की दृष्टि से कौटिल्य ने तत्कालीन समय में गणतंत्रों के औचित्य को उचित नहीं माना लेकिन राजा की शक्तियों को मर्यादित किया। कौटिल्य की शासन व्यवस्था में मंत्री परिषद एवं युवराज में शासन की शक्तियाँ निहित थीं। उनके परामर्श के अनुसार ही सम्राट निर्णय लेने एवं आदेश देने का कार्य करता था।

भारतीय संविधान एवं शासनतंत्र को यद्यपि ब्रिटिश व्यवस्था पर आधारित माना जाता है लेकिन यह कौटिल्य के राज संचालन के व्यावहारिक पक्ष से पूर्णतः मिलता जुलता है। कौटिल्य का मत था कि जिस प्रकार एक पहिये की गाड़ी चलायमान नहीं हो सकती उसी प्रकार मंत्रिपरिषद के बिना राजा राज्य का संचालन नहीं

कर सकता। वर्तमान भारतीय शासन व्यवस्था संविधान के अनुच्छेद 71 के अंतर्गत राष्ट्रपति के कार्यसंचालन में सहायता व मंत्रणा हेतु मंत्रिपरिषद का उल्लेख है जिसका प्रमुख प्रधानमंत्री होता है तथा प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है एवम प्रधानमंत्री के परामर्श पर अन्य मंत्रियों की नियुक्ति की जाती है। इस प्रकार कौटिल्य का राज्य संचालन का व्यावहारिक पक्ष आज भी प्रासंगिक है।

कौटिल्य के पश्चात् शुक्र ने भी राज्य व शासन पर सारगर्मित चिंतन प्रस्तुत किया जिसमें उन्होंने अपने पूर्वगामियों महाभारत, मनु एवं कामन्दक से एवं कौटिल्य से अप्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रतापूर्वक व्यापक सामग्री प्राप्त की। शुक्र ने शासन के आदर्श रूप का चित्रण प्रस्तुत कर राज्य के कार्यक्षेत्र का विस्तृत उल्लेख किया है। जाति के संदर्भ में शुक्र ने रूढ़िवादी न होकर सदाचरण को ही जाति की श्रेष्ठता का आधार माना।

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि वैदिक काल में राजनीति शास्त्र के चिंतन की धारा का जो स्त्रोत मिला उससे निकली चिंतनधारा पुराणकाल एवं स्मृतिकाल में प्रवाहित एवं परिवर्धित हो चाणक्य काल में धारा न रहकर भागीरथी बन गई। हमारे संस्कृत वाड़मय राज्य विषयक विचाररत्न तथा ग्रंथ रत्नों का भंडार हैं जिनके द्वारा विश्व की राजनीति ज्ञान विषयक दरिद्रता का निवारण जा सकता है।

हमारे प्राचीन चिंतकों ने राज्य के सफल संचालन एवं समाज के उत्थान हेतु जो श्रेष्ठ व्यवस्थाऐं प्रतिपादित कीं वे पुरातन काल से वर्तमान तक शासन व समाज को किसी न किसी प्रकार अनुप्राणित करती रही हैं।

निष्कर्ष

वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में जिस प्रकार भारतीय समाज विसंगतियों और समस्याओं से ग्रस्त है, नैतिक अवमूल्यन हो रहा है, अपराध प्रवृत्ति एवं अपराधों में निरंतर वृद्धि हो रही है, आतंकवाद वैश्विक संकट का कारण बन चुका है, भ्रष्टाचार के आगे कानून व व्यवस्था दुर्बल पड़ गई है ऐसे में हमारे प्राचीन चिंतकों व विद्वानों के चिंतन व अनुभवजन्य सिद्धातों एवं व्यवस्थाओं का विश्लेषण एवं मूल्यांकन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में करके निश्चय ही सकारात्मक एवं फलदायी निष्कर्षों की प्राप्ति की जा सकती है।

प्राचीन चिंतन हमारी पारम्परिक एवं सांस्कृतिक धरोहर हैं तथा ये इतने समृद्ध हैं कि इनमें विचार नहीं बल्कि व्यावहारिकता के धरातल पर राजव्यवस्थाओं के सफल संचालन के मूलमंत्र हैं। हमारी प्राचीन संस्कृति मानवीय मनोविज्ञान एवं एक सुसंगठित समाज व्यवस्था के मापदण्डों का आधार है। आवश्यकता है कि हमारे चिंतक पाश्चात्य चिंतन प्रेम एवं उनके अनसुलझे चिंतन विषयों से ऊपर उठकर प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन पर अपनी दृष्टि रखें। प्राचीन भारतीय चिंतकों द्वारा प्रस्तुत भारतीय राजनीतिक सामाजिक चिंतन पर चूँकि हमारी स्वयं की दृष्टि बहुत कम गयी है अतः वर्तमान में हमारे प्राचीन चिंतन के अध्ययन, मनन व विश्लेषण की अत्यंत आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *वी.पी. वर्मा, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 2010–11*
2. *किरण टण्डन, प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचार क, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, 1988*
3. *डॉ. श्रीराम वर्मा, भारतीय राजनीतिक विचारक, कॉलेज बुक सेन्टर, जयपुर 2000*
4. *मणिशंकर प्रसाद, कौटिल्य के राजनीतिक एवं सामाजिक विचार, प्रकाशित वर्ष 1998, भारतीय साहित्य संग्रह*
5. *गोपाल जी लल्लन, प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारधरा, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1999*
6. *हरिशचन्द्र वर्मा, प्राचीन भारतीय सामाजिक व राजनीतिक विचार एवं संस्थायें, कॉलेज बुक डिपो, नई दिल्ली, 1969*
7. *परत्मात्मा शरण, प्राचीन भारत में राजनीतिक, विचार एवं संस्थायें, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ*